श्रीमद् भगवदगीता – चौदहवाँ अध्याय

अनुक्रम

चौदहवें अध्याय का माहात्म्य.. 1
चौदहवाँ अध्यायः गुणत्रयविभागयोग.. 2

चौदहवें अध्याय का माहात्म्य

श्रीमहादेवजी कहते हैं – पार्वती ! अब मैं भव-बन्धन से छुटकारा पाने के साधनभूत चौदहवें अध्याय का माहात्म्य बतलाता हूँ, तुम ध्यान देकर सुनो। सिंहल द्वीप में विक्रम बैताल नामक एक राजा थे, जो सिंह के समान पराक्रमी और कलाओं के भण्डार थे। एक दिन वे शिकार खेलने के लिए उत्सुक होकर राजकुमारों सहित दो कुतियों को साथ लिए वन में गये। वहाँ पहुँचने पर उन्होंने तीव्र गति से भागते हुए खरगोश के पीछे अपनी कुतिया छोड़ दी। उस समय सब प्राणियों के देखते-देखते खरगोश इस प्रकार भागने लगा मानो कहीं उड़ गया है। दौड़ते-दौड़ते बहुत थक जाने के कारण वह एक बड़ी खंदक (गहरे गड्डे) में गिर पड़ा। गिरने पर भी कुतिया के हाथ नहीं आया और उस स्थान पर जा पहुँचा, जहाँ का वातावरण बहुत ही शान्त था। वहाँ हरिण निर्भय होकर सब ओर वृक्षों की छाया में बैठे रहते थे। बंदर भी अपने आप टूट कर गिरे हुए नारियल के फलों और पके हुए आमों से पूर्ण तृप्त रहते थे। वहाँ सिंह हाथी के बच्चों के साथ खेलते और साँप निडर होकर मोर की पाँखों में घुस जाते थे। उस स्थान पर एक आश्रम के भीतर वत्स नामक मुनि रहते थे, जो जितेन्द्रिय और शान्त-भाव से निरन्तर गीता के चौदहवें अध्याय का पाठ किया करते थे। आश्रम के पास ही वत्समुनि के किसी शिष्य ने अपना पैर धोया था, (ये भी चौदहवें अध्याय का पाठ करने वाले थे।) उसके जल से वहाँ की मिट्टी गीली हो गयी थी। खरगोश का जीवन कुछ शेष था। वह हाँफता हुआ आकर उसी कीचड़ में गिर पड़ा। उसके स्पर्शमात्र से ही खरगोश दिव्य विमान पर बैठकर स्वर्गलोक को चला गया फिर कुतिया भी उसका पीछा करती हुई आयी। वहाँ उसके शरीर में भी कीचड़ के कुछ छींटे लग गये फिर भूख-प्यास की पीड़ा से रहित हो कुतिया का रूप त्यागकर उसने दिव्यांगना का रमणीय रूप धारण कर लिया तथा गन्धर्वों से सुशोभित दिव्य विमान पर आरूढ़ हो वह भी स्वर्गलोक को चली गयी। यह देखकर मुनि के मेधावी शिष्य स्वकन्धर हँसने लगे। उन दोनों के पूर्वजन्म के वैर का कारण सोचकर

उन्हें बड़ा विस्मय हुआ था। उस समय राजा के नेत्र भी आश्चर्य से चकित हो उठे। उन्होंने बड़ी भक्ति के साथ प्रणाम करके पूछाः

'विप्रवर ! नीच योनि में पड़े हुए दोनों प्राणी – कुतिया और खरगोश ज्ञानहीन होते हुए भी जो स्वर्ग में चले गये – इसका क्या कारण है? इसकी कथा सुनाइये।'

शिष्य ने कहाः भूपाल ! इस वन में वत्स नामक ब्राह्मण रहते हैं। वे बड़े जितेन्द्रिय महात्मा हैं। गीता के चौदहवें अध्याय का सदा जप किया करते हैं। मैं उन्हीं का शिष्य हूँ, मैंने भी ब्रह्मविद्या में विशेषज्ञता प्राप्त की है। गुरुजी की ही भाँति मैं भी चौदहवें अध्याय का प्रतिदिन जप करता हूँ। मेरे पैर धोने के जल में लोटने के कारण यह खरगोश कुतिया के साथ स्वर्गलोक को प्राप्त हुआ है। अब मैं अपने हँसने का कारण बताता हूँ।

महाराष्ट्र में प्रत्युदक नामक महान नगर है। वहाँ केशव नामक एक ब्राह्मण रहता था, जो कपटी मनुष्यों में अग्रगण्य था। उसकी स्त्री का नाम विलोभना था। वह स्वच्छन्द विहार करने वाली थी। इससे क्रोध में आकर जन्मभर के वैर को याद करके ब्राह्मण ने अपनी स्त्री का वध कर डाला और उसी पाप से उसको खरगोश की योनि में जन्म मिला। ब्राह्मणी भी अपने पाप के कारण कुतिया हुई।

श्रीमहादेवजी कहते हैं – यह सारी कथा सुनकर श्रद्धालु राजा ने गीता के चौदहवें अध्याय का पाठ आरम्भ कर दिया। उससे उन्हें परमगति की प्राप्ति हुई।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

(अनुक्रम)

चौदहवाँ अध्यायः गुणत्रयविभागयोग

तेरहवें अध्याय में 'क्षेत्र' और 'क्षेत्रज्ञ' के लक्षण बताकर उन दोनों के ज्ञान को ही ज्ञान कहा और क्षेत्र का स्वरूप, स्वभाव विकार तथा उसके तत्त्वों की उत्पत्ति का क्रम आदि बताया। 19वें श्लोक से प्रकृति-पुरुष के प्रकरण का आरंभ करके तीनों गुणों की प्रकृति से होने वाले कहे तथा 21वीं श्लोक में यह बात भी बतायी कि पुरुष का फिर-फिर से अच्छी या अधम योनियों में जन्म पाने का कारण गुणों का संग ही है। अब उस सत्त्व, रज और तम इन तीनों गुणों के संग से किस योनि में जन्म होता है, गुणों से छूटने का उपाय कौन सा है, गुणों से छूटे हुए पुरुष का लक्षण तथा आचरण कैसा होता है.... इन सब बातों को जानने की स्वाभाविक ही इच्छा होती है। इसलिए उस विषय को स्पष्ट करने के लिए चौदहवें अध्याय का आरम्भ करते हैं।

तेरहवें अध्याय में वर्णन किये गये ज्ञान को ज्यादा स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए भगवान श्रीकृष्ण चौदहवें अध्याय के पहले दो श्लोक में ज्ञान का महत्व बताकर फिर से उसका वर्णन करते हैं –

।। अथ चतुर्दशोऽध्यायः ।।

श्रीभगवानुवाच
परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम्।
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः।।1।।

श्री भगवान बोलेः ज्ञानों में भी अति उत्तम उस परम ज्ञान को मैं फिर कहूँगा, जिसको जानकर सब मुनिजन इस संसार से मुक्त होकर परम सिद्धि को प्राप्त हो गये हैं।(1)

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च।।2।।

इस ज्ञान को आश्रय करके अर्थात् धारण करके मेरे स्वरूप को प्राप्त हुए पुरुष सृष्टि के आदि में पुनः उत्पन्न नहीं होते और प्रलयकाल में भी व्याकुल नहीं होते।(2)

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम्।
संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत।।3।।

हे अर्जुन ! मेरी महत्-ब्रह्मरूप मूल प्रकृति सम्पूर्ण भूतों की योनि है अर्थात् गर्भाधान का स्थान है और मैं उस योनि में चेतन समुदायरूप को स्थापन करता हूँ। उस जड़-चेतन के संयोग से सब भूतों की उत्पत्ति होती है।(3)

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता।।4।।

हे अर्जुन ! नाना प्रकार की सब योनियों में जितनी मूर्तियाँ अर्थात् शरीरधारी प्राणी उत्पन्न होते हैं, प्रकृति तो उन सबकी गर्भ धारण करने वाली माता है और मैं बीज का स्थापन करने वाला पिता हूँ।(4)

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम्।।5।।

हे अर्जुन ! सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण – ये प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुण अविनाशी जीवात्मा को शरीर में बाँधते हैं।(5)

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।
सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेन चानघ।।6।।

हे निष्पाप ! उन तीनों गुणों में सत्त्वगुण तो निर्मल होने के कारण प्रकाश करने वाला और विकार रहित है, वह सुख के सम्बन्ध से और ज्ञान के सम्बन्ध से अर्थात् अभिमान से बाँधता है।(6)

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासंगसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसंगेन देहिनम्।।7।।
तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।।8।।

हे अर्जुन ! रागरूप रजोगुण को कामना और आसक्ति से उत्पन्न जान। वह इस जीवात्मा को कर्मों के और उनके फल के सम्बन्ध से बाँधता है। सब देहाभिमानियों को मोहित करने वाले तमोगुण को तो अज्ञान से उत्पन्न जान। वह इस जीवात्मा को प्रमाद, आलस्य और निद्रा के द्वारा बाँधता है।(7,8)

सत्त्वं सुखे संजयति रजः कर्मणि भारत।
ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे संजयत्युत।।9।।

हे अर्जुन ! सत्त्व गुण सुख में लगाता है और रजोगुण कर्म में तथा तमोगुण तो ज्ञान को ढककर प्रमाद में लगाता है।(9)

रजस्तमस्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत।
रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा।।10।।

हे अर्जुन ! रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सत्त्वगुण, सत्त्वगुण और तमोगुण को दबाकर रजोगुण, वैसे ही सत्त्वगुण और रजोगुण को दबाकर तमोगुण होता है अर्थात् बढ़ता है।(10)

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत।।11।।

जिस समय इस देह में तथा अन्तःकरण और इन्द्रियों में चेतनता और विवेकशक्ति उत्पन्न होती है, उस समय ऐसा जानना चाहिए सत्त्वगुण बढ़ा है।(11)

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ।।12।।

हे अर्जुन ! रजोगुण के बढ़ने पर लोभ, प्रवृत्ति, स्वार्थबुद्धि से कर्मों का सकामभाव से आरम्भ, अशान्ति और विषयभोगों की लालसा – ये सब उत्पन्न होते हैं।(12)

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन।।13।।

हे अर्जुन ! तमोगुण के बढ़ने पर अन्तःकरण व इन्द्रियों में अप्रकाश, कर्तव्य-कर्मों में अप्रवृत्ति और प्रमाद अर्थात् वयर्थ चेष्टा और निद्रादि अन्तःकरण की मोहिनी वृत्तियाँ – ये सभी उत्पन्न होते हैं।(13)

यदा सत्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते।।14।।

जब यह मनुष्य सत्त्वगुण की वृद्धि में मृत्यु को प्राप्त होता है, तब तो उत्तम कर्म करने वालों के निर्मल दिव्य स्वर्गादि लोकों को प्राप्त होता है।(14)

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसंगिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते।।15।।

रजोगुण के बढ़ने पर मृत्यु को प्राप्त होकर कर्मों की आसक्ति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है, तथा तमोगुण के बढ़ने पर मरा हुआ मनुष्य कीट, पशु आदि मूढ योनियों में उत्पन्न होता है।(15)

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम्।
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम्।।16।।

श्रेष्ठ कर्म का तो सात्त्विक अर्थात् सुख, ज्ञान और वैराग्यादि निर्मल फल कहा है। राजस कर्म का फल दुःख तथा तामस कर्म का फल अज्ञान कहा है।(16)

सत्त्वात्संजायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च।
प्रमामोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च।।17।।

सत्त्वगुण से ज्ञान उत्पन्न होता है और रजोगुण से निःसंदेह लोभ तथा तमोगुण से प्रमाद और मोह उत्पन्न होते हैं और अज्ञान भी होता है।(17)

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः।।18।।

सत्त्वगुण में स्थित पुरुष स्वर्गादि उच्च लोकों को जाते हैं, रजोगुण में स्थित राजस पुरुष मध्य में अर्थात् मनुष्यलोक में ही रहते हैं और तमोगुण के कार्यरूप निद्रा, प्रमाद और आलस्यादि में स्थित तामस पुरुष अधोगति को अर्थात् कीट, पशु आदि नीच योनियों को तथा नरकों को प्राप्त होते हैं।(18)

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति।।19।।

जिस समय द्रष्टा तीनो गुणों के अतिरिक्त अन्य किसी को कर्ता नहीं देखता और तीनों गुणों से अत्यन्त परे सच्चिदानन्दघनस्वरूप मुझ परमात्मा को तत्त्व से जानता है, उस समय वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है।(19)

गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते।।20।।

यह शरीर की उत्पत्ति के कारणरूप इन तीनों गुणों को उल्लंघन करके जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था और सब प्रकार के दुःखों से मुक्त हुआ परमानन्द को प्राप्त होता है।(20)

अर्जुन उवाच

कैर्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो।
किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते।।21।।

अर्जुन बोलेः इन तीनों गुणों से अतीत पुरुष किन-किन लक्षणों से युक्त होता है और किस प्रकार के आचरणों वाला होता है तथा हे प्रभो ! मनुष्य किस उपाय से इन तीनों गुणों से अतीत होता है।

श्रीभगवानुवाच
प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव।
न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि कांक्षति।।22।।
उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते।
गुणा वर्तन्त इत्ये योऽवतिष्ठति नेंगते।।23।।
समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकांचनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः।24।।
मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते।।25।।

श्री भगवान बोलेः हे अर्जुन ! जो पुरुष सत्त्वगुण के कार्यरूप प्रकाश को और रजोगुण के कार्यरूप प्रवृत्ति को तथा तमोगुण के कार्यरूप मोह को भी न तो प्रवृत्त होने पर उनसे द्वेष करता है और न निवृत्त होने पर उनकी आकांक्षा करता है। जो साक्षी के सदृश स्थित हुआ गुणों के द्वारा विचलित नहीं किया जा सकता और गुण ही गुणों में बरतते हैं – ऐसा समझता हुआ जो सच्चिदानन्दघन परमात्मा में एकीभाव से स्थित रहता है और उस स्थिति से कभी विचलित नहीं होता। जो निरन्तर आत्मभाव में स्थित, दुःख-सुख को समान समझनेवाला, मिट्टी, पत्थर और स्वर्ण में समान भाववाला, ज्ञानी, प्रिय तथा अप्रिय को एक-सा मानने वाला और अपनी निन्दा स्तुति में भी समान भाववाला है। जो मान और अपमान में सम है, मित्र और वैरी के पक्ष में भी सम है तथा सम्पूर्ण आरम्भों में कर्तापन के अभिमान से रहित है, वह पुरुष गुणातीत कहा जाता है।(22,23,24,25)

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगने सेवते।
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते।।26।।

और जो पुरुष अव्यभिचारी भक्तियोग के द्वारा मुझको निरन्तर भजता है, वह भी इन तीनों गुणों को भली भाँति लाँघकर सच्चिदानन्दघन ब्रह्म को प्राप्त होने के लिए योग्य बन जाता है।(26)

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च।।27।।

क्योंकि उस अविनाशी परब्रह्म का और अमृत का तथा नित्यधर्म का और अखण्ड एकरस आनन्द का आश्रय मैं हूँ।(27)

ॐ तत्सदिति श्रीमद् भगवद् गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्यायः ।।14।।
इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद् भगवद् गीता के
श्रीकृष्ण-अर्जुन संवाद में गुणत्रयविभागयोग नामक चौदहवाँ अध्याय संपूर्ण हुआ।
ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ